महान अन्तर्राष्ट्रीय शहीद

हुसैन(अ०) बिन अली(अ०)

आयतुल्लाहिलउज़मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह
अनुवादकः हाशिम रज़ा रिज़वी

आज जबकि कानों में पक्षपातीय नारों की आवाज़ गूँजी हुई है, आँखें इसी प्रकार के दृश्य देखने की आदी हैं और दिल व दिमाग़ पार्टी बन्दी की भावनाओं से भरे हुए हैं, यह कहना कि हुसैन का व्यक्तित्व पार्टीबन्दियों से कहीं ऊँचा है सरसरी निगाह में ग़लत मालूम होगा जबकि स्पष्ट है कि हुसैन के व्यक्तित्व का सम्बन्ध एक ख़ास सम्प्रदाय से ही है। निस्संदेह हुसैन का सम्बन्ध एक ख़ास सम्प्रदाय से है इस अर्थ में कि हुसैन मुसलमानों में पैदा हुए और वह इस्लाम के पैग़म्बर के नाती थे लेकिन जिस प्रकार कोई नदी यद्यपि किसी ख़ास भू-भाग से निकलती हो फिर भी जहाँ-जहाँ पहुँचती है हर जाति को लाभ देती है जिस प्रकार सूर्य पूरब से निकलने पर भी पश्चिम के भी भागों को अपनी किरणों से प्रकाशित कर देता है, जिस तरह से बादल किसी एक दिशा से उठने पर भी किसी दूसरी दिशा की सूखी ज़मीन को पानी देने से नहीं रुकते ठीक उसी तरह इमाम हुसैन का बनी हाशिम के ख़ानदान में होना अरब देश और अरब जाति के दूसरे वन्शों को उनसे बिलग कर देने का कारण नहीं हो सकता।

दुनिया में विभिन्न धर्म हैं लेकिन अपनी पारस्परिक विभिन्ताओं के बावजूद कुछ अच्छाइयाँ ऐसी हैं जिनको सब धर्म ही अच्छाइयाँ ही समझते हैं और बहुत सी बुराइयाँ हैं जो सबके निकट बुराइयाँ हैं यहाँ तक कि जब बुरे आदमी भी बुराइयाँ करते हैं तो अच्छाई के नाम से। हर झूट सच के नाम से बोला जाता है। हर बेईमानी ईमानदारी के नाम से की जाती है। और यह बुराई को अच्छा कह कर करना ही इस का प्रमाण है कि बुरा आदमी भी अपने इस कार्य को बुरा ही समझता है। इसलिए मेरा विचार है कि अगर दुनिया में एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था स्थापित की जाए जिसमें सब धर्मों के अधिकारी सम्मिलित हों और उसका उद्देश्य मनुष्य जाति में उन अच्छाईयों का प्रचार करना हो जो सब ही धर्मों में अच्छी मानी गई हों और उन बुराइयों से रोकना हो जो सब के निकट बुरी हैं।

जिस प्रकार उच्च सामाजिक सिद्धान्त किसी एक सम्प्रदाय में सीमित नहीं हैं उसी तरह किसी ऐसे उच्च सिद्धान्त की शिक्षा देने वालों का व्यक्तित्व केवल किसी एक सम्प्रदाय से सम्बन्धित नहीं हो सकता। इमाम हुसैन ने एक ऐसा उच्च उदाहरण हमारे सामने रख दिया है जो हर प्रकार से हर सम्प्रदाय के लिए पथ-प्रदर्शक हो सकता है और वह है हुसैन का वह जिहाद जो उन्होंने खुद अपनी जाति वालों की ख़राबियों को दूर करने के लिए किया। हुसैन का जिहाद पक्षपात और जाति भेद से ऊँचा और परे न होता अगर वह किसी दूसरी जाति या सम्प्रदाय के विरूद्ध होता जब कि उसे दूसरे सम्प्रदाय या जाति के लोग इमाम हुसैन के मानसिक तौर पर विरूद्ध हो सकते थे लेकिन इमाम हुसैन अपनी ही जाति वालों को सुधारने के लिए लड़े थे।

हम देखते हैं कि आज निन्नानवे प्रतिशत लोग दूसरों की ख़राबियों को बढ़ा-बढ़ा कर बयान करना चाहते हैं और अपनों की ख़राबियों की ओर से आँख मूँद लेना चाहते हैं। उस समय भी जब हम यह मान भी लेते

हैं कि हमारे सम्प्रदाय या जाति वालों ने किसी दूसरे के साथ अन्याय या अत्याचार किया है तो हम यही कहना चाहते हैं कि एक तो हमारी जाति ने जो कुछ बुराई की है वह उस से कम है जो दूसरों ने की है और दूसरे यह कि इधर से जो कुछ हुआ वह केवल जवाब में हुआ। फिर जब लीडरों का यह प्रयत्न हो तो जनता पर इसका क्या प्रभाव होगा? इसका फल यह होता है कि हर जाति के लोग यह समझने लगते हैं कि जो कुछ उन्होंने किया वह बुरा होता मगर अब इसलिए बुरा नहीं है कि जवाबी तौर पर किया या यह कि जो कुछ किया वह दूसरी ओर की बुराईयों से कम है और इसलिए दोषपूर्ण नहीं है। इस भावना का नतीजा यह होता है कि साधारण जनता के व्यक्ति बदला चुकाने के लिए और ज़्यादा सख़्ती और अत्याचार पर उतर आते हैं और उसके बाद बदला लेने की कार्रवाइयाँ दोनों तरफ़ से शुरु हो जाती हैं और एक न ख़त्म होने वाली मार-काट का सिलसिला बन्ध जाता है।

इमाम हुसैन की प्रयोगात्मक शिक्षा यह है कि तुम दूसरे की बुराइयाँ खोजने की जगह खुद अपनी जाति और संस्था की ख़राबियों की ओर ध्यान दो और उन्हीं को सबसे अधिक शोचनीय समझो। सच्चे उपदेशक का यह कर्तव्य है कि वह जनता को उनकी ग़लतियों की ओर ध्यान दिलाए और दूसरे सम्प्रदाय की बुराइयों के उल्लेख को मामूली समझकर उनको इतना महत्व न दे ताकि लोगों की दृष्टि अपनी ग़लतियों पर पड़े और वह अपने सुधार की ओर ध्यान दें। कितने आश्चर्य और खेद की बात है कि धर्म के मानने वाले एक दूसरे से बुराइयों में मुक़ाबला करते हैं अर्थात यह चाहते हैं कि दूसरा बुराई में बढ़ा न रहने पाए, यदि हमारी ओर से कोई कमी रह गई हो तो हम उसको पूरी कर दें। यदि धर्म का भाव विचारों में भली-भांति पाया जाता जो अच्छाइयों में एक दूसरे से आगे बढ़ने की भांति पाया जाता तो अच्छाइयों में एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश की जाती। सच्ची बात यह है कि साधारणतः लोग धर्म (मत) को एक सच्चे सिद्धान्त के रूप में (पद पर) नहीं मानते बल्कि इस लिए मानते हैं कि वे उस धर्म के मानने वालों के घर में पैदा हुए। इसलिए मानसिक दृष्टि से देखा जाए तो वे दिल से धर्म हीन ही हैं।

अपने धर्म से ऐसे लोगों को ऐसा ही प्रेम है जैसा अपने देश, अपनी सन्तान, अपने घर या अपने किसी मित्र से होता है। यह अपने होने के आधार पर जो प्रेम होता है वह वास्तव में खुद अपना ही प्रेम है, बस इसी तरह से उनको अपने धर्म से भी प्रेम है, इसलिए उनका धार्मिक युद्ध भी इसी आधार पर होता है कि प्रत्येक व्यक्ति दूसरे को उसको उसके हक़ से कम ही देना चाहता है अतः संघर्ष, फ़साद और रक्तपात की सूरतें पैदा होती हैं। सुधारकों का कर्तव्य यह है कि वे अपनी जाति के ग़लत रास्ते पर जाने और बुरे चलन के विरूद्ध घोर संघर्ष करें चाहे इस रास्ते में उनकी जान भी काम आए। इसी को इमाम हुसैन ने सर्वोच्च शिखर पर व्यवहारिक रूप से प्रकट किया।

धर्म ने जो सिद्धान्त हमको बताया है वह यह है कि यदि हर एक को दूसरे के मुक़ाबले में उच्ता प्राप्त करना हो तो चाहिए कि वह अपने वास्तविक कर्म को उस से ऊँचा रक्खे। इस तरह अगर मुक़ाबले भी दो पक्षों में हों तो इस बात देखें कि कौन दूसरे के साथ एहसान ज़्यादा करता है। इसके नतीजे में कभी टकराव नहीं हो सकता।

इस्लाम ने जो शिक्षा दी है उसका एक साधारण उदाहरण देता हूँ। व्यापार में तराज़ू से तौलने वाली चीज़ों के सम्बन्ध में आज्ञा दी गई है कि यदि तुम खुद तौल कर बेच रहे हो तो कुछ ज़्यादा देने की कोशिश किया करो और अगर तुम ख़रीदने जाओ और दुकानदार तुम से तौलने को कह दे तो कुछ कम ही लेने की कोशिश करो। इसके बाद क्या मोल-तोल में कोई झगड़ा हो सकता है? अब अगर दो जातियों के बीच कोई मामला हो और वह इसी दृष्टिकोण से ज़मीन बांटे कि चाहे दूसरी ओर ज़्यादा ज़मीन चली जाए मगर उस दूसरे पक्ष का हक़ मारा न जाए तो फिर कोई झगड़ा या टकराव कैसे सम्भव है?

यज़ीद ने हुसैन से बैअत (किसी को ख़लीफ़ा यानी धार्मिक तौर पर हाकिम मान लेना) चाही और हुसैन ने इनकार किया। हुसैन को बैअत करने से इतना

इनकार क्यों था? इस सवाल का जवाब इसी के साथ के एक दूसरे सवाल के जवाब में मिल सकता है। आख़िर यज़ीद को हुसैन से बैबत लेने पर इतनी ज़िद क्यों थी? बस जिस लिए यज़ीद इतनी सख़्ती से बैअत लेने पर अड़ा हुआ था उसी लिए हुसैन भी बैअत करने से इतनी सख़्ती से इनकार करते थे। यज़ीद बैअत लेने का इतना इच्छुक इसलिए था कि वह समझता था कि उसने इस्लामी शास्त्र का इतना खुला हुआ विरोध किया है, और इस्लाम के इतने मोटे-मोटे उसूलों को तोड़ा है कि जिसके कारण उसको यक़ीन था कि इधर लोगों के दिमाग़ों से रिश्वत (घूस) का नशा ज़रा भी कम हुआ, उधर चमकती हुई तलवारों की चमक आँख से ज़रा ओझल हुई उधर मोटी समझ का मुसलमान भी केवल एक ही बार ध्यान देने से समझ लेगा कि यज़ीद सच्चा ख़लीफ़ा नहीं हो सकता। यज़ीद को आवश्यकता थी कि वह अपने सच्चे ख़लीफ़ा होने के पक्ष में इस्लामी शास्त्र के वास्तविक संरक्षक (यानी इमाम हुसैन) से सनद ले ली जाए ताकि अगर कभी मुसलमान जागे तो फ़ौरन उस से कह दिया जाए कि अगर सरकार इस के योग्य न होती तो रसूल के नाती, हुसैन क्यों बैअत करते? यह यज़ीद की मूर्खता थी कि उसने ऐसा सोचा भी क्योंकि हुसैन बैअत कर लेंगे। हुसैन अगर बैअत कर लेते तो सदा के लिए रहती दुनिया तक असलियत और वास्तविकता पर पर्दा पड़ जाता। इसलिए हुसैन को बैअत से इनकार करना आवश्यक था।

इस तरह हुसैन न दो नतीजे पैदा किये.... दो सिद्धान्तों को जन्म दिया, एक मुसलमानों के लिए और एक दूसरों के लिए। मुसलमानों के लिए आपने ये उसूल अपने ख़ून की लाली से लिख दिया कि धर्म शास्त्र शासक के आधीन और उसके चलन का पाबन्द नहीं होता इसलिए कभी शास्त्र के उसूलों को शासकों के चाल-चलन के द्वारा समझने की कोशिश न करना। और दूसरे सम्प्रदायों के लिए यह कि अगर तुमको इस्लामी सभ्यता, इस्लामी शिक्षा, और इस्लामी व्यवहार का अध्यन करना हो तो किसी दमिश्क़, सीरिया या हमरा या ख़ज़रा के महलों में न ढूँढना बल्कि मदीना के उन टूटे हुए खंडरों को देखना जहाँ फटे हुए पर्दे, और कच्ची दीवारें दिखाई देती हैं। इस तरह हुसैन ने सदा के लिए यज़ीद और उसी तरह के लोगों को उनके असली रूप में प्रकट कर दिया और किसी भ्रम के बाक़ी रहने की सम्भाविकता को ख़त्म कर दिया।

हुसैन का यह जिहाद जो अपनी ही जाति के लोगों के ख़िलाफ़ था अपनी क़िस्म का अलग था। वह इस्लामी जिहाद जो दूसरों के विरूद्ध लड़ा जाए उस में कुछ शर्तें होती हैं, जैसे यह कि जिहाद उस समय करना चाहिए जब जीतने की आशा हो, संख्या काफ़ी हो, सैनिकों की आयु की भी एक सीमा नियुक्त है कि इतनी आयु से कम और इनती से अधिक न हो। इसी प्रकार और भी पाबन्दियाँ है। लेकिन हुसैन ने जो जिहाद किया वह उस जिहाद से विभिन्न था। क़ुरआन में आदेश मिलता है कि 20 मुसलमान, 200 का मुक़ाबला करें लेकिन जब प्रयोग में वे उस कसौटी पर पूरे न उतरे तो कहा गया कि अच्छा सौ मुसलमान दो सौ का मुक़ाबला करें। वह पहला अनुपात ही जो क़ुरआन ने नियुक्त किया था लोगों के अमल (कार्य) की कमज़ोरी के कारण अप्रयोगीय समझा गया। अधिक से अधिक, बीस और दो सौ का अनुपात था अर्थात दस गुने के हिसाब से, लेकिन कर्बला में जो जिहाद किया गया था उसमें एक और 72, दूसरी ओर कम से कम तीस हज़ार, इनमें जो अन्तर है कहीं ज़्यादा है फिर जिहाद में संख्या का काफी होना ज़रूरी है। कर्बला की लड़ाई में संख्या को बढ़ाने के बजाए हुसैन घटाना चाहते हैं। रास्ते में जितने लोग किसी लालच के कारण साथ हो लिये थे उनसे इमाम ने हज़रत मुस्लिम की शहादत (बलिदान) की की ख़बर सुनने के बाद कहा कि "मैं किसी राजनीतिक युद्ध के लिए नहीं जा रहा हूँ, जो लोग किसी उम्मीद की वजह से साथ हों वह वापस जाएं।" और इस तरह बहुत से लोग चले गए। उसके बाद कर्बला में भी आख़िरी रात को उन्होंने अपने साथ के लोगों से कहा, "तुम में से जो जाना चाहे ख़ुशी से चला जाए।" फिर आयु की सीमा जो नियुक्ति है, वह भी यहाँ तोड़ दी गई है। एक ओर तो हबीब की आयु अस्सी वर्ष और दूसरी ओर छोटे-छोटे बच्चे यहाँ तक कि

(शेष..... पेज 7 पर)

और औरतों का तुम पर हक़ है।''

सब लोग जानते हैं कि इस्लाम से पहले अरब क़ौम में माल और जान की कोई क़ीमत न थी लूट और क़त्ल का बाज़ार गर्म रहता था जो शख़्स जिस किसी का माल चाहता था छीन लेता था और जिसको चाहता था मार डालता था कोई इंसाफ़ था और न कोई क़ानूनी निज़ाम था जिस से कमज़ोरों की जानों और उनके माल की हिफ़ाज़त की जा सकती। अम्नो सलामती के इस अज़ीम पैग़म्बर ने अपनी इस इस्लाह व हिदायत से भरी हुई तक़रीर में फ़रमाया तुम्हारे ख़ून और तुम्हारे माल उसी तरह मोहतरम हैं जिस तरह यह दिन (दसवीं ज़िलहिज्जह) इस महीने में और इस शहर में हराम है यानी मोहतरम है। मतलब यह था कि अब तुम्हारे ख़ून बग़ैर शरई और क़ानूनी जवाज़ के नहीं बहाए जा सकते और न कोई किसी का माल नाहक़ तरीक़े पर ले सकता है वरना वह बड़ा हो या छोटा हो हाकिम हो महकूम हो। सरदारे क़बीला हो या मामूली आदमी हो क़ानून की पकड़ से बच न सकेगा और उस सज़ा का मुस्तहक़ होगा जो उसके लिए मुक़र्रर कर दी गई है।

इसके बाद सरदारे अम्बिया ने दूसरे अहकामे शरीअत की तालीम दी। फिर हज़ारहा इंसानों के मजमे से फ़रमाया, तुम से ख़ुदा के यहाँ मेरी निस्बत दरयाफ़्त किया जायेगा तो तुम क्या जवाब दोगे?

सहाबा ने अर्ज़ की हम इसका यह जवाब देंगे कि आप ने अल्लाह का हुक्म और पैग़ाम हम तक पहुँचा दिया और अपने फ़र्ज़ को अदा कर दिया।

यह सुन कर हुज़ूरे अनवर ने आसमान की तरफ़ उंगली उठाई और तीन बार फ़रमाया ''ऐ ख़ुदा तू गवाह रहना''।

जिस वक़्त सरकारे दो आलम यह यादगार ख़ुतबा इरशाद फ़रमा रहे थे और ख़ुदाई अहकाम पहुँचा रहे थे उस वक़्त बजाए लाखों रुपये के तख़्ते शाही या क़ीमती शाहाना मसनद के हुज़ूर एक मामूली से फ़र्श पर बैठे हुए थे जो आपकी ऊँटनी पर पड़ा हुआ था।

शेष...... महान अन्तर्राष्ट्रीय शहीद

छः महीने का अली असग़र भी रणक्षेत्र में लाया गया।

इस से मालूम हुआ कि दूसरों के साथ जिहाद करने में जो शर्तें हैं वह अपनों से जिहाद करने में उनका भी ख़याल नहीं किया गया। बल्कि तमाम कड़ी से कड़ी मुसीबतें इस सम्बन्ध में सही गईं।

इमाम हुसैन ने दुनिया को जो सार्वलौकिक मानवी कर्तव्यों की शिक्षा दी है वह आधुनिक काल में भूले हुए पुरुषार्थ की याद दिलाने के लिए काफ़ी है। पानी रसद (युझ सामग्री) का सबसे अधिक महत्वपूर्ण सामान होने के नाते सब से अधिक क़ीमती और आवश्यक था और दुश्मन को पानी पिलाकर ताक़त देना प्रत्यक्ष रूप से अपने को कमज़ोर करना है लेकिन इमाम हुसैन ने हुर की सेना को पानी पिला कर प्रकट किया कि यद्यपि वे दुश्मन थे मगर मानवजाति के ही व्यक्ति थे और प्यासे थे इसलिए पानी उनसे बचा नहीं रक्खा जा सकता। यह नहीं कि केवल हुक्म दे दिया हो जैसा कि अधिक्तर लीडर करते हैं कि ज़बानी शिक्षा देते हैं और अगर उस पर अमल न किया गया तो यह कहते हैं कि हमने तो कह दिया था पर पार्टी वालों ने कहना न माना। बल्कि इस सच्चे पथ-प्रर्दशक की शान तो यह थी कि ख़ुद कुर्सी बिछाकर अपने सामने पानी पिलवाने लगे। निस्सन्देह इमाम हुसैन के साथी वही करते जो वह आज्ञा देते लेकिन इमाम हुसैन ने ख़ुद अपने कर्तव्य का पालन भी करना आवश्यक जाना।

अली बिन तआन मुहारिबी (जो हुर की फ़ौज के साथ आया था) कहता है कि ''मैं बहुत प्यास था। हुसैन ने इस बात को ज्ञात किया और कहा कि 'ऐ शख़्स उस ऊँट पा पानी है पली ले' मैं गया लेकिन प्यास की तेज़ी के कारण मश्क का दहाना अपने मुँह से ठीक से लगा न सका और पानी गिरने लगा। हुसैन ख़ुद उठे ओर मश्क का दहाना ठीक करके मुझे पानी पिलाया।''

यह, और इसी प्रकार की दूसरी बहुत सी शिक्षाएं हैं, जिनके आधार पर हम यह कहते हैं कि ''हुसैन का व्यक्तित्व, तमाम पक्षपातों और जाति भेदों से ऊँचा है।''